# इकाई 7 प्रश्न उपनिषद्[7]

रूपरेखा


7.0 उद्देश्य

7.1 परिचय

7.2 प्रश्न उपनिषद्: अवलोकन

7.3 प्रथम प्रश्न : समस्त प्राणियों का स्रोत

7.4 द्वितीय प्रश्न : प्राण: प्राणियों का आश्रय

7.5 तृतीय प्रश्न : प्राण और मानवीय शरीर

7.6 चतुर्थ प्रश्न : प्राण और चेतना की अवस्थाएं

7.7 पंचम प्रश्न : ॐ पर ध्यान

7.8 षष्ठम् प्रश्न : पुरुष का अस्तित्व

7.9 सारांश

7.10 कुंजी शब्द

7.11 अन्य सहायक अध्ययन–सामग्री एवं सन्दर्भ

7.12 बोध प्रश्नों के उत्तर


## 7.0 उद्देश्य

यह अध्याय *प्रश्नोपनिषद्* का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करता है। यह *प्रश्नोपनिषद्* की मुख्य अवधारणाओं की रूपरेखा खींचता है और उनके दार्शनिक महत्त्व को रेखांकित करता है।

## 7.1 परिचय

उपनिषद् वेद का तीसरा वर्गीकरण है, जिसका विषय दार्शनिक, धार्मिक और रहस्यात्मक विचार है। इसके पूर्व के भाग मन्त्र और ब्राह्मण कहलाते हैं जिनके विषय क्रमशः देव–स्तुति और यज्ञानुष्ठान हैं। इस प्रकार ये तीनों (मन्त्र, ब्राह्मण और उपनिषद्) कवि, पुरोहित और दार्शनिक की अभिव्यक्तियां हैं।

वेद के दो महत्त्वपूर्ण विभाग हैं, जिनमें से पहला कर्मकाण्ड कहलाता है। इस विभाग में मन्त्र और ब्राह्मण दोनों सम्मिलित हैं, जिसका अनुसरण एक बहुत बड़ी संख्या में लोग करते हैं, जिनका उद्देश्य आनुष्ठानिक स्तुतियों एवं यज्ञ–विधानों के द्वारा धार्मिक पुण्य प्राप्त करना होता है। दूसरा विभाग ज्ञान–काण्ड कहलाता है। यह ज्ञान का विभाग है जिसमें परम–तत्त्व के वेद–सम्मत प्रकाशना का उल्लेख है, इसके अन्तर्गत् उपनिषद् आते हैं।

[7]श्री दीपक कुमार सेठी, विद्या वाचस्पति शोधक दर्शन केन्द्र जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली, अनुवाद– डॉ. अफ़ज़ल अहमद

*यजुर्वेद* से सम्बद्ध *मुण्डकोपनिषद्* में उपनिषदों की संख्या 108 बताई गई है। इसमें *ऐतरेय* और *कौषीतकि उपनिषद् ऋग्वेद* से, *छान्दोग्य* और *केन सामवेद* से, *ईश* और *बृहदारण्यक शुक्लयजुर्वेद* से, तथा *मुण्डक, प्रश्न* और *माण्डूक्य अथर्ववेद* से सम्बन्धित हैं।

यहाँ हमारी चर्चा का प्रधान विषय *प्रश्न उपनिषद्* है, जिसका सम्बन्ध *अथर्ववेद* से है।

## 7.2 प्रश्न उपनिषद् : अवलोकन

*प्रश्नोपनिषद् अथर्ववेद* से सम्बन्धित है, यह अथर्ववेद के महत्त्वपूर्ण शाखाओं में से एक पैप्पलाद शाखा से सम्बन्धित है। ब्रह्मविद्या का ज्ञान लेने आये छः ऋषियों के द्वारा ऋषि पिप्पलाद से पूछे जाने वाले छः प्रश्नों के कारण इस उपनिषद् का नाम *प्रश्नोपनिषद्* पड़ा। पिप्पलाद का वर्णन इस उपनिषद् में एक महान शिक्षक के रुप में हुआ है। आचार्य शंकर इसे *ब्राह्मण* कहते हैं और इसे *अथर्ववेद* से ही सम्बद्ध *मुण्डकोपनिषद्* का पूरक बताते हैं। इसमें कुल 6 अध्याय हैं और प्रत्येक अध्याय एक प्रश्न से आरंभ होता है। सत्य को जानने के इच्छुक 6 ऋषि महान दृष्टा पिप्पलाद के पास गए। ये 6 ऋषि थे– सुकेश, शैव्य, सत्यकाम, अश्वलपुत्र गार्ग्य, विदर्भ के भार्गव, कबन्ध कात्यायन। उनके द्वारा पूछे गये प्रश्न इस प्रकार हैं पहला प्रश्न सृजित प्राणियों की उत्पत्ति से सम्बन्धित है, दूसरा प्रश्न मानव–व्यक्तित्व के संघटकों से जुड़ा हुआ है। तीसरा प्रश्न प्राण की उत्पत्ति और स्वभाव से जुड़ा हुआ है, चौथे का सम्बन्ध मानव–व्यक्तित्व के मनोवैज्ञानिक पक्ष से है। पांचवा प्रश्न प्रणव से जुड़ा हुआ है और छठा प्रश्न मनुष्य के तत्त्वमीमांसीय स्वरुप से जुड़ा हुआ है। *तैत्तिरीय उपनिषद्* की तरह यह भी क्रमशः जीवन के स्थूल तत्त्व से होते हुए सूक्ष्म तत्त्व पर विचार करता है, और इस प्रकार एक–एक करके जड़–तत्त्व की उन सारी तहों को खोल देता है जो आत्मा को स्वरुप से ढंके होती हैं। केवल इसी उपनिषद् में यह उल्लेख मिलता है कि जड़–तत्त्व और आत्मा के संयोग से यह सृष्टि होती है। यह उपनिषद् आत्मा पर आरोपित विभिन्न स्तरों या तलों को मिटा देता है और आत्मा के वास्तविक स्वरुप का पता लगाने का प्रयास करता है। यह जीवात्मा की पहचान परम पुरुष से स्थापित कर जीवात्मा के वास्तविक स्वरूप को परिभाषित करता है। जीवात्मा से परम पुरुष की यह पहचान, शरीर के साथ इसके आरोपित पहचान के नष्ट होने से ही संभव हो पाता है। आइए अब प्रश्न और उत्तर के संदर्भ में प्रवेश करें।

### बोध प्रश्न 1

ध्यातव्यः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का उपयोग कीजिए।

ख) इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजिए।

1. उपनिषद् पद का क्या अर्थ है?

.....

.....

.....

.....

.....

2. यह उपनिषद् 'प्रश्न उपनिषद्' क्यों कहलाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

## 7.3 प्रथम प्रश्न : समस्त प्राणियों का स्रोत

प्रथम प्रश्न कात्यायन कबन्धि ने मुनि पिप्पलाद से यह किया, "ऋषिवर , जीवों की उत्पत्ति कहां से होती है?" अथवा "ये सारे जीव किस प्रकार उत्पन्न हुए हैं?" तब पिप्पलाद ने उसे उत्तर दिया, "प्रजापति में जीवों के सृजन की कामना हुई। उसने तप किया, उसने जड़ (रयि) और जीवन(प्राण) को यह सोचते हुए उत्पन्न किया कि ये दोनों उसके लिये बहुत प्रकार से जीवों का सृजन करेंगे।" यहां प्राण बोध–संवेदन का तत्त्व या शक्ति है जो गति प्रदान करती है और रयि प्रकृति है जो बहुत सारे रुपों को सृजित करती है और धारण करती है। समष्टि और व्यष्टि प्रकृति के सभी घटक रयि कहलाते हैं। अत्याधुनिक भाषा में इसे जीवन–उर्जा और जड़–तत्त्व कह सकते हैं। इन दोनों के संयोग अथवा ऐक्य से सृष्टि उत्पन्न होती है। ब्रह्माण्ड की सभी वस्तुएं इन्ही दो तत्त्वों से निर्मित हुई हैं। इसके आगे होने वाली चर्चा रहस्यवाद से परिपूर्ण है। इतना कहना ही पर्याप्त है कि सृष्टा ने सूर्य और चन्द्रमा तथा नर एवं मादा को जीवों की उत्पत्ति के लिये सृजित किया। सूर्य को जीवों के जीवन से समीकृत किया जा सकता है। सूर्य इस पृथ्वी पर श्वसन–चक्र का मूर्त स्रोत है। प्रकाश का प्रदाता और प्रेरक होकर सूर्य, प्राण के रुप में विद्यमान रहता है। सूर्य से प्रकाशित और प्रेरित चन्द्रमा रयि का प्रतीक है। उनका कथन है कि जो तप, ब्रह्मचर्य, श्रद्धा और ज्ञानपूर्वक आत्मा को पाने चाहते हैं ये सूर्य को अधिगत कर लेंगे, यह जीवन–वायु का आधार है। यह अमर और भयरहित है। यह अन्तिम लक्ष्य है। यहाँ से ये वापस नहीं लौटते। इसके अनुसार प्रेरक उर्जा के स्रोत सूर्य की साधनापूर्वक साधक परमात्मा से अपना तादात्म्य स्थापित कर लेता है। इस प्रक्रिया में तप और ब्रह्मचर्य का पालन करना पड़ता है। यह अन्न को नित्य पिता कहता है क्योंकि यह उर्जा और प्रजनन की क्षमता प्रदान करता है। अन्न प्रजापति है, इससे जीवों की उत्पत्ति होती है। अन्न जीवों का साक्षात स्रोत है। यह महत्त्वपूर्ण है कि परिवार नियोजन की संकल्पना के बहुत पहले ही *प्रश्नोपनिषद्* में हम यौन–सम्बन्ध से जुड़े नियम देखते हैं। इस सम्बन्ध में प्रजापति के नियम का जो पालन करते हैं उन्हें ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। जो तप और ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं उन्हें सत्य की प्राप्ति होती है। यह पवित्र ब्रह्मलोक उनके लिए है, जिनमें छल–कपट, असत्य और माया का अभाव होता है।

## 7.4 द्वितीय प्रश्न : प्राणः प्राणियों का आश्रय

दूसरे प्रश्नकर्ता विदर्भदेशीय भार्गव हैं, इसका सम्बन्ध व्यक्तिनिष्ठ शक्तियों और उनमें से सबसे प्रधान कौन है, इससे है। भार्गव प्रश्न करते हैं, "प्राणियों को कितने देव धारण करते

हैं और उनमें से कौन इस शरीर को प्रकाशित करता है और उनमें से कौन सबसे श्रेष्ठ है?" इसका तात्पर्य है कि कौन से देवता इस जीव–संसार का पोषण करते हैं ? कितने देवता इस जगत् को प्रकाशित करते हैं? और उनमें से सबसे शक्तिशाली कौन है?

पिप्पलाद इसका उत्तर देते हैं, "आकाश यह देवता है, और वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, वाक्, मनस, आंख और कान। चूंकि ये शरीर को प्रकाशित करते हैं अतः ये अपने अभिमान को प्रदर्शित करते हुए कहते हैं कि ये हम हैं जो शरीर को धारण करते हैं और इसका पोषण करते हैं। यहाँ पिप्पलाद सबसे पहले महत्त्वपूर्ण तत्त्वों की गणना करते हैं–पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, वाणी, मन, चक्षु एवं कर्णेन्द्रिय। किन्तु क्या ये देवता हैं? इसके बाद सजीव तत्त्व प्राण की गणना की जाती है, नये और पुराने सभी भाष्यकार जिसकी समता श्वास के साथ स्थापित करते हैं । प्राण का आशय जीवन–तत्त्व से है, यह जीवन–ऊर्जा जो सजीवों को निर्जीवों से अलग करती है। प्राण को इस प्रकार व्याख्यायित किया गया है, जब प्राण ने उन्हें छोड़ा तो ये उपरोक्त शक्तिहीन हो गये। प्राण के बिना ये अस्तित्त्वहीन से हो गये। उन सभी जीवों में प्राण ही जीवन ही का स्रोत है। दूसरे तत्त्वों और शक्तियों ने प्राण की प्रशंसा करते हुए कहा, "जिस प्रकार चक्र के धुरी में सभी अरे मिले हुए होते हैं, उसी प्रकार हर एक वस्तु तुमसे जुड़ी है। सभी देवताओं के मध्य तुम सर्वाधिक शक्तिशाली एवं प्रखर हो। तुम सत्य यथार्थ एवं ऋषियों की चिरन्तन प्रज्ञा हो। हे प्राण! जब तुम बरसते हो तो प्राणी प्रसन्नता से नाच उठते हैं क्योंकि उन्हें प्रचुर अन्न प्राप्त होता है, तुम शुद्धता हो तथा अस्तित्व के स्वामी, माता और पिता हो। तुम जीवों के शरीर, दृष्टि और वाणी में अधिष्ठित हो, तुम हमारा त्याग मत करो। जैसे मां अपने संतान की रक्षा करती है, वैसे तुम मेरी रक्षा करो। हमें अन्न, सौभाग्य, सौन्दर्य और प्रज्ञा प्रदान करो। प्राण तथा अन्य तत्त्वों के मध्य चलने वाले इस संवाद में महर्षि पिप्पलाद ने उद्धृत किया है–इस बात पर बल दिया गया है कि जीवन–तत्त्व अथवा जीवन–ऊर्जा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु है, जिसके अभाव में यह संसार रुक जायेगा।

## 7.5 तृतीय प्रश्न : प्राण और मानव शरीर

यह तीसरा प्रश्न अश्वलपुत्र ऋषि कौशल्य के द्वारा पूछा गया है। प्रश्न इस प्रकार है, "हे भगवन् ! यह जीवन कहां से जन्म लेता है? यह इस शरीर में किस प्रकार प्रवेश करता है?

प्राण किस प्रकार उत्पन्न होता है? यह प्राणियों के शरीर में किस प्रकार प्रवेश करता है? यह अपनी उर्जा का विभाजन विभिन्न शरीर के अंगों में किस प्रकार करता है? शरीर से इसका निष्क्रमण किस प्रकार होता है? शरीर से बाहर यह किस प्रकार अस्तित्वमान रहता है? यह अन्दर किस प्रकार बना रहता है? ऋषि पिप्पलाद उत्तर देते हैं, "तुमने बहुत से कठिन प्रश्नों को पूछा है। क्योंकि तुम बहुत पवित्र हो इसलिए तुमसे कहूंगा। ऋषि पिप्पलाद कहते हैं यह अच्छा प्रश्न है किन्तु इसका उत्तर देना कठिन है। जिस प्रकार राजा राजकर्मचारियों को कुछ चिन्हित स्थलों की देखभाल के लिये कहता है। उसी प्रकार प्राण भी विभिन्न कार्यों को अपने विभिन्न उपभागों में बांट देता है। प्रधान प्राण का स्थान आंख, नाक, कान और मुंह होता है। मध्य प्राण शरीर के मध्य भाग में स्थित होता है। निम्न प्राण नीचे के अंगों में अवस्थित रहता है। आत्मा हृदय में अवस्थित होता है और यहां 101 नाड़ियां होती हैं, हर नाड़ियों में सैकड़ों शाखायें होती हैं, और हर शाखा की 72,000 उपशाखाएं होती हैं जिनसे प्राण स्पन्दित होता है।

यूनानी चिकित्साशास्त्र से बहुत पहले हृदय की संरचना का विवरण यहाँ प्राप्त होता है। हृदय की संरचना और रक्तवाहिनी नाड़ियों का यह विवरण ऋषियों की अन्तःप्रज्ञात्मक विधि का उल्लेखनीय उदाहरण है। जहाँ विज्ञान असिद्ध हो जाता है वहाँ यही विधि उपादेय होती है।

तीसरे प्रश्न के उत्तर को सारबद्ध करके पिप्पलाद कहते हैं, "प्राण, तथा जीव से इसके सम्बन्ध, शरीर को शक्ति प्रदान करने की इसकी क्षमता एवं परम शक्ति से इसके सम्बन्ध को समझने से अमरता को प्राप्त करने में सहायता मिलती है। यह तीसरा प्रश्न मनुष्य की उत्पत्ति के सम्बन्ध में एक पड़ताल है, यह आश्चर्यजनक है कि प्राचीन काल की सभ्यताओं में केवल भारत के चिन्तकों ने इसको पता लगाने की महत्ता को समझा कि मनुष्य इस ग्रह पर किस प्रकार प्रकट हुआ। प्राणियों सहित इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति किस प्रकार हुई? यह एक सृष्टि थी अथवा एक संयोग? ऋषि इसे संयोग नहीं मानते थे। बिना किसी सन्देह के यह एक सृष्टि थी। उनके अनुसार जो जगत् की उत्पत्ति, प्रसार, अधिष्ठान और इसके पांच भागों में वर्गीकरण को जानते हैं, उसके पास प्राण का ज्ञान है और यह अमरता को प्राप्त करता है।

## 7.6 चतुर्थ प्रश्न : प्राण और चेतना की अवस्थाएं

अब सूर्यकुल के गार्ग्य के द्वारा चौथा प्रश्न पूछा जाता है। इस पुरुष में कौन सोता है और कौन जागता, तथा कौन देव स्वप्न देखता है? किसे यह सुख अनुभव होता है और किसमें यह प्रतिष्ठित है? प्रश्न को इसप्रकार रखा जा सकता है। एक सोते हुए मनुष्य के शरीर में विद्यमान विभिन्न देवताओं की क्या स्थिति होती है? उसमें से कौन सोते रहता है और कौन जागते रहता है और कौन स्वप्न देखता है, कौन सुख का अनुभव करता है, ये किसको अपना आश्रय बनाते हैं? यह एक अद्भुत प्रश्न है। इसके उत्तर में पिप्पलाद सूर्य के किरणों का दृष्टान्त प्रस्तुत करते हैं, उनके अनुसार जब सूर्यास्त होता है तो किरणें उर्जा के स्रोत में विलीन हो जाती हैं। इसी प्रकार प्रगाढ़ अवस्था में इन्द्रियां परम–तत्त्व में विलीन हो जाती हैं। इसके बाद काव्यात्मक ढंग से पिप्पलाद कहते हैं– जिस प्रकार चिड़ियां रात होने पर अपने आश्रय वृक्ष पर लौट आती हैं, उसी प्रकार सभी इन्द्रियां परम पुरुष को लौट आती हैं।

तत्पश्चात्, सुप्ति अवस्था के विषय में पिप्पलाद कहते हैं, "सोते समय, स्वप्न की अवस्था में जाग्रत् अवस्था में अनुभव की गई वस्तुओं को ही अनुभव करता है। जाग्रत् अवस्था में देखी गई वस्तुओं के चित्र खींचता है, यह जो कुछ सुनता और अनुभव करता, जो भू–दृश्य इसके देखें हुए या अनदेखे हैं, सबकुछ जो इसे ज्ञात है या अज्ञात है, यह उसके चित्र खींचता है। मनोविज्ञान के इतिहास में स्वप्नों की व्याख्या का यह पहला प्रयास कहा जा सकता है। पिप्पलाद अपनी रहस्यवादी शिक्षा को जारी रखते हुए कहते हैं, "पाँच तत्त्व, दस इन्द्रियां, मन, अहंकार, इन्द्रिय–विषय स्पर्श, रस, रुप, गन्ध और शब्द, बुद्धि और सब जो यह समझती है, हृदय और जो सब जो यह अनुभव करता है, प्रकाश और जो कुछ प्रकाशित होता है, यह सब कुछ परम सत्ता के द्वारा नियन्त्रित होता है।" यह परम सत्ता दृष्टा है। यह सभी वस्तुओं को स्पर्श करती है, सभी का रसास्वाद करती है, सभी का अनुभव करती है। यह कर्त्ता है। यह ज्ञाता है। इसका विनाश नहीं होता। जो इस छायारहित, रंगरहित, शरीररहित, द्युतिमान, अविनाशी परम तत्त्व को समझता है, यह सबकुछ जानता है। ऐसा मनुष्य अमर है। और अन्त में यह कहता है, "हे पुत्र! जो इस अविनाशी को जानता है, जिसमें सारे देव, जीवन–प्राण और तत्त्व आरोपित हैं, यह वस्तुतः इस ब्रह्माण्ड को जानता है।" उपरोक्त वाक्य

का अर्थ है कि जो अविनाशी प्राण और तत्त्वों को जानता है, यह वस्तुतः सब कुछ जानता है। यह सब कुछ जानता है जो कुछ जानने योग्य है।

## 7.7 पंचम प्रश्न : ॐ पर ध्यान

शैव्य सत्यकाम पिप्पलाद से पूछते हैं, "हे भगवन! मनुष्यों में जो जीवनपर्यन्त ओंकार का चिन्तन करते हैं, यह ऐसा करके किस लोक को जीत लेता है?

ऋषि उत्तर देते हैं कि ओंकार अविनाशी शब्द है। यह पूर्ण ब्रह्म का सूचक है। जो बुद्धि मान व्यक्ति इसका चिन्तन करता है, वो सभी लोकों को पा लेता है। यदि कोई व्यक्ति इस शब्द के किसी एक अक्षर पर भी ध्यान लगाता है तो यह महान प्रगति को प्राप्त करता है। यह महान आनन्द का अनुभव करता है। ओंकार के दो अक्षरों का उच्चारण करके, यजुर्वेद की स्तुतियों की कृपा से व्यक्ति उच्च अवस्था को प्राप्त कर लेता है और स्वर्गलोक को जाता है। किन्तु यह लौट आता है। किन्तु जो ओंकार के तीनों अक्षरों का एक साथ चिन्तन करता है, यह सूर्य और शक्ति के उच्चतम लोक को प्राप्त होता है। उसके सारे पाप कट जाते हैं। यह भौतिक और आध्यात्मिक सभी कर्मों को कुशलतापूर्वक करता है। इसी से मिलता–जुलता प्रकरण *माण्डूक्य उपनिषद* में भी पाया जाता है, जहां ओंकार की महिमा का वर्णन किया गया है।

## 7.8 षष्ठम् प्रश्न : पुरुष का अस्तित्व

भारद्वाज सुकेश पिप्पलाद से पूछते हैं, "भगवन! कौशल देश के राजा हिरण्यनाभ ने मुझसे आकर यह प्रश्न पूछा था, "क्या तू सोलह कलाओं वाले पुरुष को जानता है? मैंने उत्तर दिया कि मैं उसे नहीं जानता, क्योंकि यदि मैं उसे जानता, तो मैं तुम्हें अवश्य उसके विषय में बताता, मैं तुमसे झूठ नहीं कह सकता क्योंकि जो असत्य भाषण करता है, वह जड़ से सूख जाता है, इतना कहकर यह चुपचाप चला गया। अब मैं आपसे उसके विषय में पूछता हूं कि यह पुरुष कौन है?" उपरोक्त कथन का आशय यह है कि कौशल के राजा ने मुझसे पूछा कि क्या मैं सोलह कलाओं वाले पुरुष को जानता हूँ, मैंने उत्तर दिया कि नहीं जानता हूं क्या आप इसका उत्तर दे सकते हैं?

पिप्पलाद ने उत्तर दिया, "वत्स! यहां भी यह पुरुष विद्यमान है, प्रत्येक जीव के अन्तरतम में यह विद्यमान है, क्योंकि उसमें ही सोलह कलाओं का जन्म होता है।" यह परम पुरुष प्रत्येक जीव के शरीर के अन्दर विद्यमान है। स्रष्टा ने जगत् की सृष्टि के समय विचार किया कि इस शरीर में ऐसा क्या है जिसके चले जाने पर मैं भी चला जाऊंगा और जिसके बने रहने पर मैं भी बना रहूंगा। तब उसने प्राण रचा, और फिर प्राण से श्रद्धा, आकाश, वायु, तेज, जल, पृथिवी, इन्द्रिय, मन और अन्न को, अन्न, वीर्य, और उससे सब कुछ अस्तित्व में आया। तप, मन्त्र, कर्म और लोकों को और लोकों में नाम को उत्पन्न किया। जैसे नदी सागर में मिलकर उसमें विलीन हो जाती है और अपने नाम–रूप की पहचान खो देती है उसी प्रकार से जीवात्मा परमात्मा में अपनी पहचान मिटा देता है, परमात्मा चक्के की नाभि की तरह है जिसमें सारे अरे आकर मिले होते हैं, जब कोई परम पुरुष को जान लेता है तो यह परम पुरुष में विलीन हो जाता है। परम पुरुष से ही सब कुछ उत्पन्न होता है और परम पुरुष में ही सबकुछ अन्त में विलीन हो जाता है। यह आत्मा हमें अज्ञान से ज्ञान की ओर ले जाने में सहायता करती है। शरीर से हमारे आत्मा की मिथ्या पहचान ही अज्ञान है और

आत्मा की परमात्मा से पहचान ही ज्ञान है। यह परम पुरुष अपने स्वरुप में एक, अखण्ड और अविभाज्य सत्ता है। जीवात्मा का नानात्व या अनेक होने का भाव अज्ञान और माया है। नानारुप जीवात्मा जब परम पुरुष में विलीन हो जाता है तो यह एक, अखण्ड अविभाज्य सत्ता वाला हो जाता है।

अपने प्रश्नों का उत्तर सुनकर, उन्होनें प्रशंसा की और कहा, "आप वास्तव में हमारे पिता हैं। आप हमें अज्ञान से पार किनारे ले आये हैं।"

**बोध प्रश्न 2**

**ध्यातव्यः** क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का उपयोग कीजिए।

ख) इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजिए।

1. प्राण से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

.....

.....

2. तादात्म्यता से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

.....

.....

## 7.9 सारांश

*प्रश्नोपनिषद्* का आरम्भ सृष्टि अथवा इस विश्व में सजीव और निर्जीव सत्ताओं की उत्पत्ति तथा इसका अवसान परम पुरुष की धारणा से होता है जिससे मुक्ति संभव होती है। जीवात्मा की वास्तविक पहचान परम पुरुष ही है। *प्रश्नोपनिषद्* के अनुसार, प्राण सजीव को निर्जीव से अलग करता है, प्राण अपने वास्तविक स्वरूप में शुद्ध चेतना, स्वप्रकाश, स्वयं–प्रमाण और अविकारी है। सजीव अपना स्वभाव जन्म के समय ग्रहण करता है। यह सत्ता का उपाधिकृत स्वभाव है। इसका वास्तविक स्वरुप अज्ञान के आवरण से ढंका हुआ है और सतत विद्यमान है। इस प्रकार सत्ता का वास्तविक स्वरुप यह पाना है जो यह पहले से है। मुक्ति का अर्थ परम पुरुष से एकात्म स्थापित करना है। जीवात्मा का परम पुरुष के साथ एकात्म स्थापित हो जाने के बाद जीवात्मा परमात्मा में विलीन होकर परमात्मा ही हो जाता है। यह परम पुरुष अद्वैतस्वरुप है और इसजगत् का प्रत्येक प्राणी मुक्त होकर उसी में विलीन हो जाता है।

## 7.10 कुंजी शब्द

**ज्ञान काण्ड** : वेद का ज्ञान से सम्बन्धित भाग (आत्मा की प्रकृति, विश्व का कारण, मोक्ष इत्यादि की चर्चा करने वाला भाग)

**ब्रह्म विद्या** : संस्कृत शब्द ब्रह्म और विद्या से व्युत्पन्न, शास्त्रीय ज्ञान की वह शाखा जिसमें परमसत्ता का अध्ययन किया जाता है।

**प्राण** : सांस लेना, जीवित रहना।

**रयि** : जड़ (प्रकृति)

**माया** : अभिधार्थ, भ्रम या जादू। माया शब्द के भारतीय दर्शन में प्रसंगानुसार अनेक अर्थ हैं।

**ॐ** : उपनिषदों में वर्णित पवित्र ध्वनि और आध्यात्मिक प्रतीक। यह परम सत्ता के सार, चेतना या ब्रह्म को विशेषित करता है।

## 7.11 अन्य सहायक अध्ययन–सामग्री एवं सन्दर्भ

जोशी, के. एल., ओ. एन. बिमल एण्ड बिन्दिया त्रिवेदी. *112 उपनिषद्स*, वोल. 2. देल्हीः परिमल प्रकाशन, 2006.

डायसन, पॉल. *सिक्स्टी उपनिषद्स ऑफ द वेद*, वोल. 2, ट्रान्स. वी. एम. बेडेकर एण्ड जी. बी. पल्सुले. न्यू देल्हीः मोतीलाल बनारसीदास, 1987.

तत्त्वानन्द, स्वामी. *उपनिषदिक स्टोरीज एण्ड देयर सिग्निफिकेन्स*. कलडीः श्री रामकृष्ण अद्वैत आश्रम, 1988.

देसाई, आर. जी. उपनिषद्सः *एन्शियन्ट विज़डम ऑफ इण्डिया*. मुम्बईः द एशियन एज पब्लिशर्स लि., 2006.

शर्मा, शुभ्रा. *लाइफ इन द उपनिषद्स*. न्यू देल्हीः अभिनव पब्लिकेशनस, 1985.

श्री ऑरोबिन्दो. *एट उपनिषद्स*. पॉण्डिचेरीः श्री ऑरोबिन्दो आश्रम, 1953.

### हिन्दी अध्ययन सामग्री

*प्रश्नोपनिषद्, शांकरभाष्य सहित*. गोरखपुरः गीताप्रेस, विक्रम सम्वत् 2066.

## 7.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

### बोध प्रश्न 1

1. ऐतेरेय उपनिषद् में, उपनिषद् शब्द समीप बैठने के अर्थ में प्रयुक्त है। उपनिषद् शब्द तीन शब्दों, उप–नि–सद् से मिलकर बना है, उप का अर्थ है समीपता, नि का अर्थ है, ज्ञान के प्रति अग्रसर होना और धातु सद् के तीन अर्थ हैं– नष्ट होना, पहुँचना या प्राप्त करना और ढीला पड़ना। द्वितीयतः, उपनिषद् का अर्थ है यह पुस्तक जो ब्रह्म ज्ञान की चर्चा करती है। कुछ विद्वान उपनिषद् का अर्थ है नीचे समीप बैठना करते हैं। गुरु के समीप बैठे शिष्य ज्ञान प्राप्त करते हैं या अपने संदेहों की चर्चा करते हैं।

2. यह प्रश्न उपनिषद् कहलाता है, क्योंकि इस उपनिषद् का मर्म प्रश्न हैं। प्रश्न उपनिषद् छह प्रश्नों और उनके उत्तरों को केन्द्रिय रूप में रखता है, इसलिए इसका नाम ऐसा प्रसिद्ध हुआ। ये प्रश्न हैं; जीवन कैसे आरम्भ हुआ? जीवित कौन है? मनुष्य की प्रकृति क्या है और ऐसी प्रकृति क्यों है? मानव किससे सिद्ध है? ध्यान क्या है और क्यों करना चाहिए? मानव में अमरत्व क्या है?

## बोध प्रश्न 2

1. प्राण शरीर का सूक्ष्म तत्व है। इसका दृश्यमान वायु है और अदृश्य वह शक्ति है जो शरीर में प्रवाहित है और इसे धारण करती है। यह हमारे जीवन और गति के लिए उत्तरदायी है। प्राण के बिना जीवित नहीं रहा जा सकता है। प्राण अन्नमय कोष को मनोमय कोष से जोड़ता है। प्राण से गति है। प्राण से ही कोई प्राणी जीवित कहलाता है, अन्यथा अजीवित (मृत) कहलाता है।

2. 'तादात्म्य' की दार्शनिक अवधारणा इसे यह सम्बन्ध मानती है, जो एक व्यक्ति स्वयं से या स्वयं के सादृश्य (या समरूप) के साथ रखता है। इसके कारण ही कोई व्यक्ति जीवनपर्यन्त पहचाना जा पाता है। प्रश्न उपनिषद् में, इस ब्रह्माण्ड सभी प्राणियों का तादात्म्य ब्रह्म से माना गया है। यह जीवात्मा और परमात्मा के मध्य का तादात्म्य है। तादात्म्यता इस ब्रह्माण्ड में प्रत्येक की प्रतिभिज्ञा है, जोकि परमसत्ता के मूल में विराजित है। नाम और रूप का भेद परम सत्ता से तादात्म्यता के पश्चात् परिसमाप्त हो जाता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY